शुरुआती प्रगतिशील आलोचना

प्रश्नपत्र – हिंदी आलोचना

कोड – HIND 3012

पाठ्यक्रम – स्नातक (प्रतिष्ठा) हिंदी

सेमेस्टर - VI

प्रो. प्रमोद मीणा,

हिंदी विभाग

महात्मा गांधी केंद्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी – 845401

* हिंदी साहित्य में प्रगतिशीलता एक आंदोलन के रूप में दिखाई देती है

इसकी शुरुआत प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अधिवेशन से होती है जिसका आयोजन 1936 में लखनऊ में हुआ था

इसी के कुछ समय बाद रचनात्मक साहित्य में प्रयोगशीलता के उदाहरण कविता में दिखाई देते हैं – तारसप्तक (1943)

चली आती परंपरा से टकराकर नयी राहों के अन्वेषण की ललक प्रयोगशीलता की मुख्य पहचान बनी

प्रगतिवाद और प्रयोगशील, दोनों धाराओं ने अपने-अपने ढंग से चली आ रही परंपरा और स्थिति में परिवर्तन पर बल दिया

दोनों के रास्ते और लक्ष्य अलग-अलग किंतु दोनों को प्रेरणा पश्चिम से ही मिली थी

प्रगतिवादी आलोचना के सैद्धांतिक आधार हैं – मार्क्स, एजेंल्स, लेनिन, स्टालिन, प्लेखानोव और कॉडवेल आदि

प्रयोगवादियों के प्रेरक थे – टी.एस.इलियट, एज़रा पाउंड और टी ई ह्यूम

मार्क्सवाद की सैद्धांतिकी आयात करने पर भी बिना जनाधार और मानववादी दृष्टिकोण के उसका व्यवहार संभव न था अत: मार्क्सवादी आलोचना ने अपनी आरंभिक लड़खड़ाहट के बाद अपने जातीय तत्वों की अंगुली पकड़ ली

किंतु इसका अर्थ यह नहीं कि साहित्य में प्रगतिशील तत्व पहले थे ही नहीं

प्रगतिवादी साहित्य का संबंध मार्क्सवाद से जरूर है किंतु जिन प्रवृत्तियों का समुच्चय मार्क्सवाद है, उनमें से कई पहले भी दिखाई देती हैं

मार्क्सवाद या प्रगतिवाद को प्राचीन साहित्य और संस्कृति के खिलाफ समझने की गलती हमें नहीं करनी चाहिए

मार्क्सवाद एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण है जो प्राचीन साहित्य का अध्ययन तत्कालीन परिस्थितियों के संदर्भ में करने का आग्रही

प्रेमचंद : साहित्यकार या कलाकार स्वभावत: ही प्रगतिशील होता है

प्रगतिशीलता का लक्षण – अप्रिय अवस्थाओं का अंत करना

प्रेमचंद का साहित्य प्रगतिशीलता की सच्ची कसौटी क्योंकि वे हमारी जनता के प्रतिनिधि साहित्यकार

प्रगतिशीलता का भेदक लक्षण
कोई कालखंड नहीं अपितु
अपने युग की अभिव्यक्ति

हर साहित्यकार अपने युग की सीमाओं से बंधा अवश्य होता है किंतु देखने की चीज यह होती है कि वह अपने साहित्य में अन्याय पर न्याय की विजय दिखाता है कि नहीं

किंतु विदेश में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना करने वाले आदर्शवादी युवकों (मुल्कराज आनंद और सज्जाद जहीर) को हमारे देश की साहित्यिक परंपराओं की उतनी जानकारी नहीं थी

प्रगतिशील लेखक संघ के घोषणापत्र में हमारे साहित्य के क्रांतिकारी पक्ष की उपेक्षा

1935 का यह घोषणापत्र कहता था कि –

"भारतीय साहित्य पुरानी सभ्यता के नष्ट हो जाने के बाद से जीवन की यथार्थताओं से भागकर उपासना और मुक्ति की शरण में जा छिपा है। ... पिछली दो सदियों में विशेषकर इसी तरह का साहित्य रचा गया है जो हमारे इतिहास का लज्जास्पद काल है।"

किंतु जब यह घोषणापत्र तैयार किया गया, उस समय तक हिंदी कविता भारतेंदु और दविवेदी युगों से होकर छायावाद तक विकसित हो चुकी थी। रवीन्द्रनाथ, प्रेमचंद और इकबाल उस समय साहित्य लिख रहे थे

प्रेमचंद ने अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रगतिशीलता की विशेषता बताते हुए यथार्थ के आग्रह पर बल दिया था, वे साहित्य में एक स्वस्थ परंपरा का विकास चाहते थे

- किंतु प्रारंभिक प्रगतिशील आलोचना साहित्य की परंपरा का मूल्यांकन करते हुए सरलीकरण की शिकार हो गई
- समय की आवश्यकता समझते हुए भी ये आरंभिक आलोचक प्राचीन और समसामयिक साहित्य के अंतर्विरोधों को पकड़ने में चूक गये

प्रेमचंद ने साहित्यकार को स्वभावत: प्रगतिशील बताया था और इस दृष्टि से प्राचीन साहित्यकारों का भी विश्लेषण अपेक्षित था

किंतु हिंदी के शुरुआती प्रगतिवादी आलोचकों ने तो घोषणापत्र की पूँछ पकड़कर क्या तो प्राचीन और क्या नवीन, हर प्रकार के साहित्य को गैर प्रगतिवादी ठहरा दिया

हिंदी के शुरुआती प्रगतिशील आलोचक

- शिवदान सिंह
- राहुल सांकृत्यायन
- यशपाल
- रांगेय राघव
- प्रकाशचंद गुप्त

रामविलास शर्मा द्वारा हिंदी की प्रगतिवादी आलोचना की इन सीमाओं को को पहचानकर दूर करने का महान कार्य किया जाना

धन्यवाद